कहानी

वसीयतनामा

तनुजा चौबे

वक्त बहुत तेज़ी से गुजरता है. बीते पल याद बनते देर नहीं लगती. सुबह चाय के साथ अख़बार पढ़ना मेरी पुरानी आदत थी, जो शादी के बाद भी नहीं बदली. शादी से पहले का समय साहित्यिक गतिविधियों में बीता. पापा की गिनती साहित्यकारों में होती थी, और उन्हीं की वजह से मेरी पढ़ने-लिखने की रुचि बनी रही. मेरे पति की भी यही आदत थी—सुबह सबसे पहले अख़बार का उत्तर-पृष्ठ पढ़ते कि कोई परिचित तो नहीं चला गया. एक दिन बोले, अरे! सुभाष अंकल नहीं रहे. मैं दो दिन पहले ही उनसे मिलकर आई थी. उनकी हालत देखकर अनहोनी की आशंका हो गई थी. आँखें भर आईं. आदेश और मैं उनके घर जाने को तैयार हो गए.

अंकल के घर पहुँचते ही देखा—साहित्यकार, पीडब्ल्यूडी स्टाफ और रिश्तेदारों का जमावड़ा लगा था. मुझे देखकर घरवालों के चेहरे उतर गए. जब मैं उनके कमरे की तरफ बढ़ी, तो उनके छोटे भाई के बेटे ने रोकते हुए कहा, दीदी, आप यहीं रहो. अंदर घर के लोग हैं. उसकी आवाज़ में तल्ख़ी थी. मेरी रुलाई फूट पड़ी. आदेश ने मुझे सीढ़ियों पर बिठा दिया. उस पल मुझे अहसास हुआ कि मेरा उनके साथ कोई खून का रिश्ता नहीं था—बस पापा की दोस्ती ही तो थी. मगर यह रिश्ता सालों पुराना था, जिसे उनके परिवार में कोई मान्यता नहीं थी.

जब पापा का तबादला इंदौर हुआ, वे बहुत खुश हुए. वहीं सुभाष अंकल से गहरी दोस्ती हुई. दोनों ने साथ पढ़ना-लिखना शुरू किया. अंकल ने यहीं नौकरी की, संपन्नता आ गई, मगर रिश्वतखोरी की आदत भी लग गई थी. फिर भी दोनों की दोस्ती पर कभी असर नहीं पड़ा.

जब मैं पहली बार सुभाष अंकल से मिली, मैं बारह साल की थी. गोरा-चिट्टा, हँसमुख चेहरा और सुनहरे बाल. उन्होंने मुझे पास बिठाकर एक फाइव स्टार चॉकलेट दी, और तब से मैं उनसे बहुत जुड़ गई. हर शाम अंकल और पापा की साहित्यिक बैठकें होतीं. उनके घर की जिम्मेदारियाँ—तीन बेटियाँ, निठल्ले भाई, आर्थिक शोषण—ये सब उन्हें थका देते थे. शायद इसीलिए वे हर शाम हमारे घर चले आते थे.

धीरे-धीरे अंकल का रात का खाना भी हमारे घर होने लगा. तीनों भाई-बहनों में मुझे उनसे विशेष लगाव था. मैं ही उन्हें जगाने जाती थी. घरवालों को मुझसे कुछ कहने की हिम्मत नहीं होती थी. वक़्त तेज़ी से बीता. पापा और अंकल की दोस्ती और भी गहरी हो गई.

मेरे स्कूल का फेयरवेल था. पापा चाहते थे कि मैं मम्मी की साड़ी पहनूँ, पर मैं कुछ अलग चाहती थी. उसी शाम अंकल फिरोज़ी साड़ी लेकर आए, जो उन्होंने खुद पसंद की थी. पापा को यह अच्छा नहीं लगा. उन्होंने गुस्से में कहा, तेरी गलत कमाई से तेरे घर की हालत है, मेरे घर की नहीं. अंकल दो दिन तक घर नहीं आए. मुझे अपने व्यवहार पर पछतावा हुआ. पापा ने मुझे उनके घर जाने से मना कर दिया.

रविवार को माँ ने दाल-बाटी बनाई, जो अंकल को पसंद थी. मैंने टिफिन में रखकर चुपके से अंकल के घर जाकर उन्हें उठाया. उनकी आँखों में आँसू थे. वे बोले, चलो घर चलकर खाते हैं. मैंने पापा और अंकल की फिर से दोस्ती करवाई. यह उनका पहला और आखिरी झगड़ा था.

समय ने सब कुछ बदल दिया. पापा की मृत्यु हो गई. अंकल टूट गए. उनके परिवार में कोई उनका साथ नहीं दे रहा था. एक दिन भाई ने भी उन्हें ताने मारे. मेरा संयम टूट गया. मैंने जवाब दिया और माँ ने मुझे थप्पड़ मारा. मगर शाम को माँ ने खुद जाकर अंकल से क्षमा माँगी. अंकल ने भी सम्मान बनाए रखा.

इसके बाद भी वे मुझे बुलाते, मेरी लिखी कविताएँ, कहानियाँ सुनते. वे चाहते थे कि मैं लिखती रहूँ. मैं उनकी बेटी जैसी थी. शादी के बाद मैं आदेश को उनसे मिलवाने ले गई. वह बहुत खुश हुए. शादी में वे नहीं आ सके, लेकिन मेरे ससुराल में रहते हुए भी वे मेरे घर बेहिचक आते रहे.

अंकल और मेरे बीच अनोखा रिश्ता था. वे अब भी मुझे चॉकलेट देते थे. उनके घर के लोग, ख़ासकर बहू-बेटियाँ, यह सब पसंद नहीं करती थीं. लेकिन मुझे फर्क नहीं पड़ता था. मैं अपनी कहानियाँ सुनाने जाती, वे ध्यान से सुनते. अब उम्र ढलने लगी थी. कभी हँसते हुए कहते, तेरा पापा ऊपर अकेला है, मुझे बुला रहा है. मैं भी हँसकर कहती, जाओ ना. गुड़िया के स्कूल और सास-ससुर के आने से व्यस्तता बढ़ गई. कई बार अंकल से मिलने नहीं जा पाती, तो वे खुद फोन कर लेते. फिर वो दिन आया—अंकल को गए पंद्रह दिन बीत चुके थे. आदेश ने बताया, अंकल की वसीयत पढ़ी जा रही है, तुम्हें बुलाया गया है. मेरा मन डर से भर गया. लोग क्या सोचेंगे? मैंने तो कभी कुछ चाहा ही नहीं. वहाँ पहुँची, तो सबकी निगाहें मुझ पर थीं, जैसे मैं कोई अपराधी हूँ. मन मेरा भी घबरा रहा था कि अंकल और मेरे रिश्ते में सिवाय स्नेह के और कोई माँग नहीं थी, फिर मैं आज यहाँ क्यों हूँ?

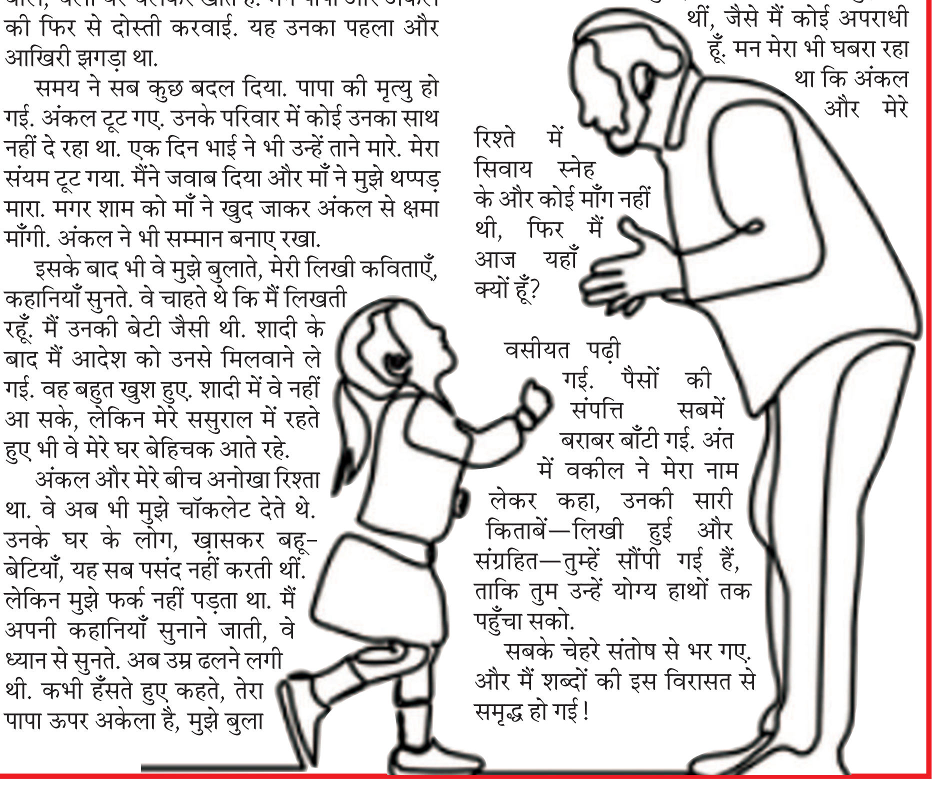

वसीयत पढ़ी गई. पैसों की संपत्ति सबमें बराबर बाँटी गई. अंत में वकील ने मेरा नाम लेकर कहा, उनकी सारी किताबें—लिखी हुई और संग्रहित—तुम्हें सौंपी गई हैं, ताकि तुम उन्हें योग्य हाथों तक पहुँचा सको.

सबके चेहरे संतोष से भर गए. और मैं शब्दों की इस विरासत से समृद्ध हो गई!

क्लास by बड़े भाई

जिसने सीमाओं से परे सोचा

संदीप द्विवेदी
कवि/प्रेरक वक्ता/स्किल ट्रेनर

दुनिया कहती थी कि पहाड़ तोड़े नहीं जा सकते, पर एक दिन दुनिया ने यह भी देखा कि किसी ने छैनी हथौड़ी से पहाड़ के बीच से रास्ता बना दिया. दुनिया के लिए पर्वत की ऊँचाई छूना एक असंभव कहानी थी पर एक दिन दुनिया ने कितने ही पैर,गगनचुंबी पर्वत के शिखरों को छूते हुए देखे. आसमान इंसानों के उड़ने के लिए नहीं है, यह बात भी एक दिन झुठला दी गई. छोटे भाई, दुनिया अपनी जगह सही थी.

सच है, पहाड़ के बीच रास्ता कैसे बन सकता है, विशाल पर्वत को, पैर कैसे लांघ सकते हैं, इंसान कैसे उड़ सकता है. फिर यह सब झूठ कैसे हो गया. किसने इस दुनिया के स्थिर जल में पत्थर फेंके. और इसका जवाब है कि हममें से ही किसी ने. जिसने सीमाओं से परे सोचा. जिसने अपनी क्षमताओं का असीमित होने पर विश्वास किया. जिसने माना कि जो सोचा जा सकता है वो किया भी जा सकता है. इस नज़रिए के साथ किए गए प्रयासों ने, दुनिया द्वारा असंभव करार दी गयी घटना को, संभव करके उसे अचंभित किया.

छोटे भाई, आपके भीतर क्षमताओं पर लगी अपनी सीमाओं से परे जाओ. उस बाज़ के बच्चे वाला किस्सा याद करो जो अचानक से मुर्गी के अंडों के बीच गिर जाता है, जहाँ वह मुर्गी के बच्चों के साथ रहते रहते अपने आसमान नापने की क्षमता को वो एक लंबे समय तक नहीं जान पाता और बाज़ के परिवार से होकर भी मुर्गियों की तरह ही ज़मीन पर चलते हुए जीवन जीता रहता है. सतर्क रहो और अपने जीवन को उस बाज़ के बच्चे की तरह होने से बचाओ. जब भी आपको कोई मुश्किल, कोई चुनौती डराए तो अपनी क्षमताओं को याद करना और फिर इसी विश्वास के साथ सामना करो कि यह तुम्हारी क्षमताओं के आगे कुछ भी नहीं. तुम देखोगे,दुनिया को एक बार फिर अचंभित होता हुआ. बस, यही कहना था.

कला रंग

कलम और कूंची के विलक्षण कलाकार हैं विश्वास

गोविंद शर्मा

बंद कमरों के बीच बच्चों को तयशुदा पाठ्यक्रम से पढ़ाना कोरा दायित्व निर्वहन होता है. कुछ शिक्षक गुरूतर कार्य करते है ये ही सच्चे गुरु होते हैं. वे अपने विद्यार्थियों को इन्ही पुस्तकों से,इन्ही बंद कमरों से बाहर निकालकर अन्य कलाओं का ज्ञान भी सौंपते हैं. इसके लिए गुरु का भी कलाओं में दक्ष होना जरूरी है. ऐसे ही एक कलाकार, शिक्षाविद, और साहित्यकार हैं विश्वास सोनी.

साहित्य की बात करें तो वे उभरते कवि हैं, शब्द साधना करते हुए उनकी नई किताब शब्द चित्र माय क्लासरूम इन दिनों बहुत चर्चा में है. स्कूली जीवन को एक विद्यार्थी और फिर एक शिक्षक के रूप में देखा है. अपने इन्ही अनुभवों को ना सिर्फ कलमबद्ध किया है अपितु हर कविता के साथ सार्थक रेखांकन या चित्रांकन भी स्वयं विश्वास सोनी ने किया है. उनकी किताब के विमोचन, लोकार्पण एवम संवाद कार्यक्रमों में वरिष्ठ साहित्यकारों द्वारा उनके लेखन का उनके रेखांकन का भरपूर स्वागत किया गया है.

विश्वास इन दिनों कविता पोस्टर पर भी उत्कृष्ट कार्य कर रहे हैं. साहित्य संवाद के साप्ताहिक पटल कलम,कूँची और कविता में आपके इस हुनर को हर बुधवार को देखा जा सकता है. हर महत्वपूर्ण अवसर पर भी शब्दों और तूलिका के संजोग से आप चमत्कार रचते जा रहे हैं. त्यौहारों पर उनके बनाए पोस्टर सोशल मीडिया पर वायरल हो रहे हैं. प्रतिष्ठित साहित्यिक समूह उनके कविता पोस्टर यथावत साझा कर विश्वास को मान्यता प्रदान कर रहे हैं. विश्वास थर्मोकोल पर भी गजब का काम करते हैं.थर्मोकोल कला को अन्य कलाओं की तरह मान्यता नहीं है.आप विश्वास का थर्मोकोल पर अद्भुत काम देखेंगे तो दंग रह जायेंगे. गणतंत्र दिवस पर विभिन्न विभागों की झांकियों को संवारते समय विश्वास की कला दृष्टि का लाभ लिया ही जाता है. अपने विभाग को कई बार अव्वल रखने में विश्वास सोनी की इसी पारखी कला दृष्टि का योगदान है.

विश्वास सोनी बतौर पेशा अध्यापन से जुड़े हैं. शिक्षण के अतिरिक्त वे कई शासकीय एवं सामाजिक दायित्व भी निभाते हैं. समाज एवम सरकार के बीच एक मजबूत सेतु के रूप में शिक्षक ही होता है. इतने कामों के बीच क्लासरूम में बच्चों को पढ़ाने के अतिरिक्त अन्य कला गतिविधियों से जोड़ना, शासकीय कार्यक्रमों की थीम पर पूरी संजीदगी से काम करना. विश्वास पर विभाग को पूरा विश्वास है. उनका काम भी खरा सोने जैसा है.

केलीग्राफी के माध्यम से सुंदर प्रमाणपत्र बनाना हो अथवा आकर्षक पैकेज में प्रभावी संदेश भेजना हो विश्वास अपनी तूलिका लेकर हमेशा तैयार रहते हैं. शब्दों और रंगों से कागज़ के कोरेपन की उदासी को दूर कर एक हसीन रंगीन दुनिया की रचना कर देते हैं. रंगों का संयोजन हो अथवा एक ही पृष्ठभूमि पर आकृतियां उकेरना,विश्वास दोनो ही काम पूरी दक्षता के साथ करते हैं. विश्वास ने कैलीग्राफी हो या रेखांकन, थर्मोकोल कला हो या चित्रांकन किसी भी कला की औपचारिक शिक्षा नहीं ली है. वे जन्मजात ईश्वर प्रदत्त प्रतिभा से सुसंपन्न हैं. कला उन्हें ईश्वर के वरदान के तरह मिली है वहीं साहित्य उन्हें पिता से विरासत में मिला है. उनके पिता स्वयं एक संकोची किंतु समर्थ साहित्यकार हैं.

लघु कथाएं

गंतव्य

बसंत राघव

जैसे ही मैं शहर के तिराहे से गांव जाने वाली सड़क की ओर मुड़ा ही था. मुझे एक बुढ़िया ने रुकने का इशारा किया.

बुढ़िया ने मुझसे कहा बेटा मुझे कोटमी गांव तक जाना है. अगर मोटर साइकिल में बैठा लेते तो मैं भी तुम्हारे साथ चल देती. मैं धुनकी से रूई की धुनाई का काम करती हूँ. मैंने कहा माता जी बैठा तो लेता लेकिन तुम्हारे पास जो गठरी है हल्की तो हो सकती है ,लेकिन बहुत बड़ी है. उसे रखकर मोटरसाइकिल में बैठने में बहुत दिक्कत होगी. मैं एक मास्टर हूँ माताजी कोटमी गांव के आगे ही अंधियारी गांव में मेरा स्कूल है मुझे स्कूल भी समय में पहुंचना है. बुढ़िया इतना सुनते ही तुरंत बोल पड़ी तो रुको मत बेटा,तुरंत जाओ. मेरी पोती भी तो उसी स्कूल में पढ़ने जाती है. सावित्री नाम है उसका. बिना बाप की लड़की को पढ़ाने का जिम्मा मेरा है. मैं तो धीरे - धीरे रेंगते - रेंगते हुए अपने गांव पहुंच ही जाऊंगी. मेरी वजह से बच्चों की पढ़ाई नहीं रुकनी चाहिए. बुढ़ी अम्मा की बातें सुनकर मैं हतप्रभ था. मैं सुनसान सड़क में बिना देरी किये अपने गंतव्य की ओर मुड़ गया.

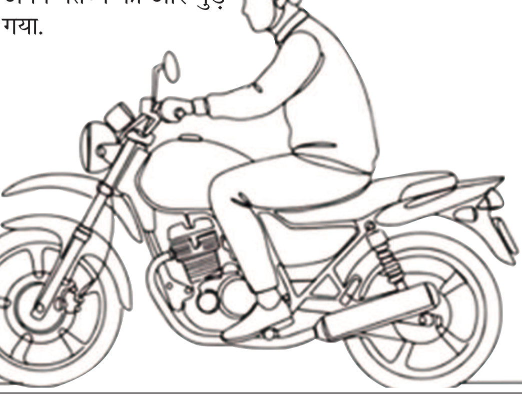

गिद्ध द्वय

हम तीन थे, मेरे सामने जो दो गद्देदार सुनहरी कुर्सी रखीं हुई थी, उसमें दोनों आदमी विराजमान थे. उसमें से एक आदमी ब्लैक सूट, मंहगी लोरो पियानो जैकेट, सलीकेदार तरीके से बाँधी गई लाल टाई, कलाई में लग्जरी घड़ी और सल्वाटोर फेरागामो या फिर शायद जॉन लॉब के जूते पहने हुए था.

दूसरा आदमी एक सफेद शर्ट, नेवी ब्लू सूट और इटालो फेरेटी ब्रांड की लाल रंग की टाई, पैरों में ऑक्सफोर्ड जूते और चीन का बनी हुई बेल्ट पहना हुआ था. दोनों मेरे आमने - सामने बैठे हुए थे. उनके बीच मुझको लेकर बातचीत हो रही थी. कभी उनकी बातें इतनी धीमी होती कि पास बैठे मुझे भी सुनाई नहीं पड़ती थी. तो कभी तल्ख़ और ऊंची हो जाती थी. कभी वे दोनों खड़े होकर एक दूसरे की ओर तर्जनी दिखा- दिखाकर परस्पर वाक्युद्ध करते नजर आते. दोनों टेबल में हाथ पटकते रहते .दोनों की नज़रें बस एक दूसरे की ओर ही मुखातिब थीं. लेकिन दोनों में से किसी ने भी मेरी तरफ एक बार भी नहीं देखा न ही मुझसे कोई बातचीत की.

थोड़ी देर की बातचीत के बाद वे प्रस्थित हो गए लेकिन मै अपनी जगह पर निर्वस्त्र खड़ा हुआ हूँ. मेरे आसपास की दीवारें और छत सब एकाएक गायब हो गई हैं. टेबल भी कहीं नज़र नहीं आ रही है. लेकिन सामने की दोनों कुर्सियां अब भी वैसी ही पड़ी हुई हैं. कुर्सियों में दो बड़े गिद्ध आकर बैठ गए हैं जो अपनी जलती हुई आँखों से मुझे घूर रहे है. मैंने ऊपर की ओर निहारा नीले आसमान में सैकड़ों चील उडते नजर आ रहे हैं.

भीगा बचपन

विजय सिंह चौहान

बाबूजी, आज बच्चे न तो छाता ले कर गए और न बरसाती.... भीग गए तो... जुकाम हो जाएगा और पढ़ाई का नुकसान होगा, सो अलग! चिंता में भीगी बहू ने शिकायत की.

बाबूजी हल्के से मुस्कराए,

बहू, भीगना भी सीख का हिस्सा है. हमारे ज़माने में बारिश स्कूल हुआ करती थी—छप-छप खेल, कीचड़ में सितोलिया, भीगते हुए हँसी के फव्वारे. न हाइजीन की चिंता, न सर्दी का डर... मिट्टी में लोट-पोट होना ही असली ज़िंदगी थी.

बोलते-बोलते बाबूजी की आंखों में बचपन भीगने लगा.

क्षणभर को बहू चुप रही, फिर मुस्करा कर राजेश को फोन लगाया, सुनिए, आज मौसम बड़ा प्यारा है... थोड़ा जल्दी आ जाइए, लांग ड्राइव पर चलेंगे. बहुत दिन हुए बारिश में भीगे!

कविताएं

बादल ऐसे आते हैं

डॉ. श्रीमती कमल चतुर्वेदी

खेतों में, आँगन में
गलियों में सड़कों पर
कितना जल फैलाते हैं
उमड़-घुमड़ कर
कितना शोर मचाते हैं
बादल ऐसे आते हैं ....
पहले बरखा के
कितने रंग हुआ करते थे
मेघदूत के छंद
हृदय के संग हुआ करते थे
मेघ कल्हार, कजरी की
उमंग हुआ करते थे
अब तो मौसम भी
बस रस्म निभाते हैं ......
बादल ऐसे आते हैं .....

कैसे हैं ये बादल भी
दो चार दिन रूकते हैं
फिर वापस हो जाते हैं
आते भी तो ऐसे हैं जैसे पाहुने आते हैं ..

यादें

लाड़कुंवर राजपूत

यह भँवर बड़ा दुखदाई
पलकों को कर गया नम हरजाई
कल को आज मे जिंदा रखा है
मन को आस में इसने बाँधे रखा है
कुछ कितनी मीठी हैं
हौले से दे गई मुस्कानें
जिनमें था सुकून
हर पल भीतर बसता निश्छल प्रेम
कुछ कितनी कड़वी हैं
भर गई आहें
कलेजे को चीर दे, धोखों के घात
छीन गई मुस्कुराहट
दे गई बेचैन लकीरें चेहरे पर
इनका है सफर सुहाना
किस्सा कोई पुराना
अब हैं जीने का सहारा
सुख- दुख में जी लेना
बीते पलों का हिसाब न रख पाना
भुरभुरे पन्नों पर छाई तस्वीर पुरानी
कुछ धुँधली, कुछ उजली
जो मेरी ज़िंदगी की बीती कहानी
तुम दिल में बसी रहना
तुम बिन उजड़ा मेरा मन बेचार
पलकों पर सजी रहें यादें
होठों पर आती रहे फरियादें

पुस्तक समीक्षा

यह मछलियों की नींद का समय है और लोग शिकार पर निकले हैं

मनीष वैद्य

यह मछलियों की नींद का समय है और लोग शिकार पर निकले हैं. यह कहने को महज एक पंक्ति है लेकिन इस एक पंक्ति में कितनी बड़ी बात लेखक ने कह दी है. जब हम इसके आलोक में अपने हालिया समाज को थोड़े गौर से देखें तो बरबस ही हजारों सवाल हमारे सामने साँप की तरह फुँफकारते फन फैलाए खड़े नज़र आते हैं. यह पंक्ति हमारे आज के समय को लेकर एक बड़ा प्रतीक बनकर उभरती है.

कविता की तरह लिखी यह पंक्ति दरअसल हिन्दी की साठोत्तरी कहानी के चर्चित हस्ताक्षर और महत्त्वपूर्ण कथाकार सतीश जायसवाल के कहानी संग्रह 'राजमार्ग क्रमांक 6' की एक कहानी में है. यह एक बानगी भर है, लेकिन प्रकारांतर से पूरी किताब में इस तरह के कई प्रतीक आते हैं; जो हमारे समाज और समय की नब्ज़ टटोलते हैं. इनमें ज़्यादातर कहानियाँ सत्तर और अस्सी के दशक के समाज और समय को लेकर लिखी गईं हैं. कहानियों के भीतर वह समय झाँकता भी है पर बावजूद इसके ये कहानियाँ पचास साल बीत जाने के बाद भी उतनी ही मार्मिक और मासूम सी लगती है. और लगे भी क्यों न! इन पचास सालों में हम आगे जाने के भ्रम में और पीछे ही गए हैं, जहाँ स्थितियाँ और भी बदतर, त्रासद और वीभत्स हुईं हैं. विकास की अंधी दौड़ में हम सब कुछ डूबोते जा रहे हैं. जिस 'राजमार्ग क्रमांक 6' पर यह कहानी रची गई है, अब वह भी नहीं बचा, एक और बड़ी सड़क 'राजमार्ग क्रमांक 200' ने उसे लील लिया है. उसकी पहचान मिटा दी है. संभावना प्रकाशन ने इस किताब को सुरुचिपूर्ण ढंग से प्रकाशित किया है.

बेहद सहज-सरल अंदाज़ में सीधी और खरी-खरी कहानियाँ रच देना बेहद मुश्किल काम है लेकिन जो लेखक अपने गाँव-जवार और अंचल-जनपद से गहरे जुड़ा हो तो उसके लेखन में ये विशेषताएँ खुद-ब-खुद अ जाती है. पचास सालों से लगातार गद्य रचने वाले वरिष्ठ कथाकार सतीश जायसवाल के इस संग्रह की कहानियाँ ऐसी ही हैं. लेकिन इस साधारण में अनायास हमें बहुत कुछ असाधारण छुपा हुआ सा जान पड़ता है और पाठक चौंक उठता है.यह असाधारण ही इन कहानियों का कद अचानक बड़ा बना देता है. इन कहानियों में जानी-पहचानी जगहें, सड़कें, चौक, थिएटर, तालाब, पार्क, जंगल, नदी और उसके घाट सब कुछ जस का तस है. कहानियों में उनके शहर बिलासपुर और छत्तीसगढ़ के इस वास्तविक भूगोल को आसानी से पकड़ा-समझा जा सकता है. इससे कथ्य की प्रामाणिकता बढ़ जाती है और कहानी पर भरोसा बढ़ जाता है.

संग्रह की भूमिका में सिद्धेश्वर सिंह भी इसे रेखांकित करते हुए कहते हैं-कहानी यदि किसी स्थानिकता के 'एसेंस' को देर तक, दूर तक पहुँचाती है तो यह उसकी एक अलग तरह की विशिष्टता होगी जिसे इस 'ग्लोबल' समय में एक 'इंडिकेटर' की तरह इसलिए भी याद किया जाएगा कि यह प्रकारांतर से कहानी का एक ऐसा 'जिओ टैग' होगा जो कि निरंतर बदलती जाती दुनिया के पाठक को सिर्फ़ 'नेविगेट' ही नहीं करेगा बल्कि अपनी उर्वर कथाभूमि के स्पर्श, रस, गंध और उसके साथ लेखक की आपसदारी का एक स्पष्ट पता भी देगा. 'राष्ट्रीय राजमार्ग क्रमांक 6' कहानी 30 नवम्बर 1977 के एक दिन का ऐसा ब्यौरावार विवरण है जो अपनी तरफ़ से कुछ नहीं कहते हुए भी छत्तीसगढ़ के पूरे आदिवासी अंचल की पारम्परिक सामाजिक-आर्थिक स्थितियों, विसंगतियों, विडम्बनाओं और कथित विकास की अवधारणा को बेहद सधे हुए अंदाज़ में परत-दर -परत पाठक के सामने खोलती है.

राजमार्ग क्रमांक 6 (कहानी संग्रह)
सतीश जायसवाल
संभावना प्रकाशन, हापुड़
मूल्य-250 रुपए

संपादकीय बोर्ड | प्रबंध संपादक : सुमीत माहेश्वरी, समूह संपादक : क्रांति चतुर्वेदी